श्रीमद्भागवतम्

प्रथम स्कन्ध

SGD

श्रीमद् भागवत पुराण

अध्याय 2:

दिव्यता तथा दिव्य सेवा

श्रीलगुरुदेव

श्लोक 1:

रोमहर्षण के पुत्र उग्रश्रवा (सूत गोस्वामी) ने ब्राह्मणों के सम्यक् प्रश्नों से पूर्णत: प्रसन्न होकर उन्हें धन्यवाद दिया और वे उत्तर देने का प्रयास करने लगे।

श्लोक 2:

श्रील सूत गोस्वामी ने कहा : मैं उन महामुनि (शुकदेव गोस्वामी) को सादर नमस्कार करता हूँ जो सबों के हृदय में प्रवेश करने में समर्थ हैं। जब वे

यज्ञोपवीत संस्कार अथवा उच्च जातियों द्वारा किए जाने वाले अनुष्ठानों को सम्पन्न किये बिना संन्यास ग्रहण करने चले गये तो उनके पिता व्यासदेव उनके वियोग के भय से आतुर होकर चिल्ला उठे, “हे पुत्र,” उस समय जो वैसी ही वियोग की भावना में लीन थे, केवल ऐसे वृक्षों ने शोकग्रस्त पिता के शब्दों का प्रतिध्वनि के रूप में उत्तर दिया।

श्लोक 3:

मैं समस्त मुनियों के गुरु, व्यासदेव के पुत्र (शुकदेव) को सादर नमस्कार करता हूँ जिन्होंने संसार के गहन अंधकारमय भागों को पार करने के

लिए संघर्षशील उन निपट भौतिकतावादियों के प्रति अनुकम्पा करके वैदिक ज्ञान के सार रूप इस परम गुह्य पुराण को स्वयं आत्मसात् करने के बाद अनुभव द्वारा कह सुनाया।

श्लोक 4:

विजय के साधनस्वरूप इस श्रीमद्भागवत का पाठ करने (सुनने) के पूर्व मनुष्य को चाहिए कि वह श्रीभगवान् नारायण को, नरोत्तम नरनारायण ऋषि को, विद्या की देवी माता सरस्वती को तथा ग्रंथकार श्रील व्यासदेव को नमस्कार करे।

श्लोक 5:

हे मुनियों, आपने मुझसे ठीक ही प्रश्न किया है। आपके प्रश्न श्लाघनीय हैं, क्योंकि उनका सम्बन्ध भगवान् कृष्ण से है और इस प्रकार वे विश्व-कल्याण के लिए हैं। ऐसे प्रश्नों से ही पूर्ण आत्मतुष्टि हो सकती है।

श्लोक 6:

सम्पूर्ण मानवता के लिए परम वृत्ति (धर्म) वही है, जिसके द्वारा सारे मनुष्य दिव्य भगवान् की प्रेमा-भक्ति प्राप्त कर सकें। ऐसी भक्ति अकारण तथा अखण्ड होनी चाहिए जिससे आत्मा पूर्ण रूप से तुष्ट हो सके।

श्लोक 7:

भगवान् श्रीकृष्ण की भक्ति करने से मनुष्य तुरन्त ही अहैतुक ज्ञान तथा संसार से वैराग्य प्राप्त कर लेता है।

श्लोक 8:

मनुष्य द्वारा अपने पद के अनुसार सम्पन्न की गई वृत्तियाँ यदि भगवान् के सन्देश के प्रति आकर्षण उत्पन्न न कर सकें, तो वे निरी व्यर्थ का श्रम होती हैं।

श्लोक 9:

समस्त वृत्तिपरक कार्य निश्चय ही परम मोक्ष के निमित्त होते हैं। उन्हें

कभी भौतिक लाभ के लिए सम्पन्न नहीं किया जाना चाहिए। इससे भी आगे, ऋषियों के अनुसार, जो लोग परम वृत्ति (धर्म) में लगे हैं, उन्हें चाहिए कि इन्द्रियतृप्ति के संवर्धन हेतु भौतिक लाभ का उपयोग कदापि नहीं करना चाहिए।

श्लोक 10:

जीवन की इच्छाएँ इन्द्रियतृप्ति की ओर लक्षित नहीं होनी चाहिए। मनुष्य को केवल स्वस्थ जीवन की या आत्म-संरक्षण की कामना करनी चाहिए, क्योंकि मानव तो परम सत्य के विषय में जिज्ञासा करने के निमित्त बना है। मनुष्य की वृत्तियों का इसके

अतिरिक्त, अन्य कोई लक्ष्य नहीं होना चाहिए।

श्लोक 11:

परम सत्य को जानने वाले विद्वान अध्यात्मवादी (तत्त्वविद) इस अद्वय तत्त्व को ब्रह्म, परमात्मा या भगवान् के नाम से पुकारते हैं।

श्लोक 12:

ज्ञान तथा वैराग्य से समन्वित गम्भीर जिज्ञासु या मुनि, वेदान्त-श्रुति के श्रवण से ग्रहण की हुई भक्ति द्वारा परम सत्य की अनुभूति करता है।

श्लोक 13:

अत: हे द्विजश्रेष्ठ, निष्कर्ष यह निकलता है कि वर्णाश्रम धर्म के अनुसार अपने कर्तव्यों को पूरा करने से जो परम सिद्धि प्राप्त हो सकती है, वह है भगवान् को प्रसन्न करना।

श्लोक 14:

अतएव मनुष्य को एकाग्रचित से उन पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के विषय में निरन्तर श्रवण, कीर्तन, स्मरण तथा पूजन करना चाहिए, जो भक्तों के रक्षक हैं।

श्लोक 15:

हाथ में तलवार लिए बुद्धिमान मनुष्य भगवान् का स्मरण करते हुए कर्म की

बँधी हुई ग्रंथि को काट देते हैं। अतएव ऐसा कौन होगा जो उनके सन्देश की ओर ध्यान नहीं देगा?

श्लोक 16:

हे द्विजो, जो भक्त समस्त पापों से पूर्ण रूप से मुक्त हैं, उनकी सेवा करने से महान सेवा हो जाती है। ऐसी सेवा से वासुदेव की कथा सुनने के प्रति लगाव उत्पन्न होता है।

श्लोक 17:

प्रत्येक हृदय में परमात्मास्वरूप स्थित तथा सत्यनिष्ठ भक्तों के हितकारी भगवान् श्रीकृष्ण, उस भक्त के हृदय से भौतिक भोग की इच्छा को

हटाते हैं जिसने उनकी कथाओं को सुनने में रुचि उत्पन्न कर ली है, क्योंकि ये कथाएँ ठीक से सुनने तथा कहने पर अत्यन्त पुण्यप्रद हैं।

श्लोक 18:

भागवत की कक्षाओं में नियमित उपस्थित रहने तथा शुद्ध भक्त की सेवा करने से हृदय के सारे दुख लगभग पूर्णत: विनष्ट हो जाते हैं और उन पुण्यश्लोक भगवान् में अटल प्रेमाभक्ति स्थापित हो जाती है, जिनकी प्रशंसा दिव्य गीतों से की जाती है।

श्लोक 19:

ज्योंही हृदय में अटल प्रेमा भक्ति स्थापित हो जाती है, प्रकृति के रजोगुण तथा तमोगुण के प्रभाव जैसे काम, इच्छा तथा लोभ हृदय से लुप्त हो जाते हैं। तब भक्त सत्त्वगुण में स्थित होकर परम सुखी हो जाता है।

श्लोक 20:

इस प्रकार शुद्ध सत्त्व में स्थित होकर, जिस मनुष्य का मन भगवान् की भक्ति के संसर्ग से प्रसन्न हो चुका होता है उसे समस्त भौतिक संगति से मुक्त होने पर भगवान् का सही वैज्ञानिक ज्ञान (विज्ञान तत्त्व) प्राप्त होता है।

श्लोक 21:

इस प्रकार हृदय की गाँठ भिद जाती है और सारे सशंय छिन्न-भिन्न हो जाते हैं। जब मनुष्य आत्मा को स्वामी के रूप में देखता है, तो सकाम कर्मों की शृंखला समाप्त हो जाती है।

श्लोक 22:

अतएव, निश्चय ही सारे अध्यात्मवादी अनन्त काल से अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक भगवान् श्रीकृष्ण की भक्ति करते आ रहे हैं, क्योंकि ऐसी भक्ति आत्मा को प्रमुदित करने वाली है।

श्लोक 23:

दिव्य भगवान् प्रकृति के तीन गुणों—सत्त्व, रज तथा तम—से अप्रत्यक्ष रूप से सम्बद्ध हैं और वे भौतिक जगत की उत्पत्ति, पालन तथा संहार के लिए ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव, इन तीन गुणात्मक रूपों को ग्रहण करते हैं। इन तीनों रूपों में से सत्त्व गुण वाले विष्णु से सारे मनुष्य परम लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

श्लोक 24:

अग्निकाष्ट मृदा का रूपान्तर है, लेकिन काष्ट से बेहतर धुँआ है। अग्नि उससे भी उत्तम है, क्योंकि अग्नि से (वैदिक यज्ञों से) हमें श्रेष्ठ ज्ञान के

लाभ प्राप्त हो सकते हैं। इसी प्रकार रजोगुण तमोगुण से बेहतर है, लेकिन सत्त्वगुण सर्वश्रेष्ठ है, क्योंकि सत्त्वगुण से मनुष्य परम सत्य का साक्षात्कार कर सकता है।

श्लोक 25:

पूर्वकाल में समस्त महामुनियों ने भगवान् की सेवा की, क्योंकि वे प्रकृति के तीनों गुणों से परे हैं। उन्होंने भौतिक परिस्थितियों से मुक्त होने के लिए और फलस्वरूप परम लाभ प्राप्त करने के लिए पूजा की। अतएव जो कोई इन महामुनियों का अनुसरण करता है वह भी इस भौतिक संसार में मोक्ष का अधिकारी बन जाता है।

श्लोक 26: जो लोग मोक्ष के प्रति गम्भीर हैं, वे निश्चय ही द्वेषरहित होते हैं और सबका सम्मान करते हैं। किन्तु, फिर भी वे देवताओं के घोर रूपों का अस्वीकार करके, केवल भगवान् विष्णु तथा उनके स्वांशों के कल्याणकारी रूपों की ही पूजा करते हैं।

श्लोक 27:

जो लोग रजोगुणी तथा तमोगुणी हैं वे पितरों, अन्य जीवों तथा उन देवताओं की पूजा करते हैं, जो सृष्टि सम्बन्धी कार्यकलापों के प्रभारी हैं,

क्योंकि वे स्त्री, धन, शक्ति तथा सन्तान का लाभ उठाने की इच्छा से प्रेरित होते हैं।

श्लोक 28-29:

प्रामाणिक शास्त्रों में ज्ञान का परम उद्देश्य पूर्ण पुरुषोत्तम परमेश्वर श्रीकृष्ण हैं। यज्ञ करने का उद्देश्य उन्हें ही प्रसन्न करना है। योग उन्हीं के साक्षात्कार के लिए है। सारे सकाम कर्म अन्तत: उन्हीं के द्वारा पुरस्कृत होते हैं। वे परम ज्ञान हैं और सारी कठिन तपस्याएँ उन्हीं को जानने के लिए की जाती हैं। उनकी प्रेमपूर्ण सेवा करना ही धर्म है। वे ही जीवन के चरम लक्ष्य हैं।

श्लोक 30:

इस भौतिक सृष्टि के प्रारम्भ में, उन भगवान् (वासुदेव) ने अपने दिव्य पद पर रहकर अपनी ही अन्तरंगा शक्ति से कारण तथा कार्य की शक्तियाँ उत्पन्न कीं।

श्लोक 31:

भौतिक पदार्थ की उत्पत्ति करने के बाद, भगवान् (वासुदेव) अपना विस्तार करके उसमें प्रवेश करते हैं। यद्यपि वे प्रकृति के गुणों में रहते हुए उत्पन्न जीवों में से एक जैसे लगते हैं, किन्तु वे सदैव अपने दिव्य पद पर पूर्ण रूप से आलोकित रहते हैं।

श्लोक 32:

परमात्मा रूप में भगवान् सभी वस्तुओं में उसी तरह व्याप्त रहते हैं जिस तरह काष्ठ के भीतर अग्नि व्याप्त रहती है और इस प्रकार यद्यपि वे एक एवं अद्वितीय हैं, वे अनेक प्रकार से दिखते हैं।

श्लोक 33:

भौतिक जगत के तीन गुणों से प्रभावित हुए जीवों के देह में परमात्मा प्रविष्ट होते हैं और सूक्ष्म मन के द्वारा तीन गुणों के फल भोगने के लिए जीवों को प्रेरित करते हैं।

श्लोक 34:

इस प्रकार सारे ब्राह्माण्डों के स्वामी देवताओं, मनुष्यों तथा निम्न पशुओं से आवासित सारे ग्रहों का पालन-पोषण करने वाले हैं। वे अवतरित होकर शुद्ध सत्त्वगुण में रहने वालों के उद्धार हेतु लीलाएँ करते हैं।

* * * * * * *

श्रीलगुरुदेव